बस अब बहुत हुआ...

अमृता नंदी-जोशी

मैं दिल्ली में जन्मी और पली हूं। यहां मुझसे पहले मेरा शरीर बड़ा हो गया था। होना ही था- मैं एक लड़की जो थी। अपनी तरह की अन्य लड़कियों की ही तरह मैंने पुरुषों की वासना और लोलुप नज़रों को बचपन में ही अनुभव कर लिया था। छुटपन में जाने-अनजाने लोगों के अनचाहे छूने-सहलाने को भी मैंने सहा था। तब मैं शर्मीली, सहमी और उलझी सी महसूस करती थी। मुझे किसी तरह पता था कि ये सब गलत है पर क्यों या कैसे यह नहीं पता था।

एक बार घर के पास ही चलते-चलते मैं यौन छेड़छाड़ का शिकार बन गई थी, पर सड़कें, पार्क व बाज़ार मेरी जगह भी तो थीं। फिर क्यों ये जगहें मुझे हमेशा डराती-धमकाती रहीं? कुछ महिलाओं के लिए घर एक सुरक्षित आश्रय व बाहर की दुनिया कंटीली बाड़ी होती है। और कइयों के लिए घर के गलियारे भी बाहर के रास्तों की तरह वासना व हिंसा के चौराहे। हमारे कस्बों व शहरों की करोड़ों औरतों के लिए सुरक्षित जगहें मौजूद हैं ही नहीं। अब तक मैं जान गई थी कि मेरे लिए खुद से बचना नामुमकिन था।

फिर मैंने अपने कामकाजी जीवन की शुरूआत की और अपनी मासूमियत में मान लिया कि दफ्तर के व्यवसायिक माहौल में सड़क के अनचाहे स्पर्श की कोई जगह नहीं होगी। पर एक बार फिर मैं गलत साबित हुई। जिस संस्थान में मैं नौकरी करती थी उसका वरिष्ठतम अफ़सर, जो अब एक अंतर्राष्ट्रीय विख्यात वैज्ञानिक है, मेमने की खाल में भेड़िया निकला। अधिकांश लोगों के लिए सत्ता और मानसिक श्रेष्ठता के इस 'प्रतीक' का 'मज़ाकिया' व्यवहार व दफ्तर की कुछ महिलाओं के साथ संबंध इस संस्थान का एक दशक पुराना इतिहास था। अपने इस बॉस के गंभीर इरादों से मैंने बड़ी मज़बूती से खुद को बचाए रखा। इसी बीच यह भी पता चला कि काम के सिलसिले में बॉस के साथ विदेश यात्रा पर गई एक सहकर्मी ने अचानक काम पर आना बंद कर दिया।

चित्र: प्रिया कुरियन

मुझे और गहरा सदमा लगा जब मैंने पाया कि इस संस्थान में कोई प्रतिकारी शिकायत सेल नहीं है। लिहाज़ा मैंने एक उम्रदराज़ वरिष्ठ पुरुष अधिकारी से अपनी शिकायत की। पहले तो उसने मेरी बात पर यकीन नहीं किया फिर मुझे सब भूलकर भगवान का ध्यान करने की सलाह दी। जब मैंने नौकरी छोड़कर उच्च शिक्षा के लिए ऑक्सफॉर्ड जाने की बात की तो उसने मेरा दाखिला रद्द करने की धमकी दी। वह खुद एक विदेशी कॉलेज में पढ़ा चुका था इसलिए मुझे डर था कि ऐसा करना उसके लिए मुश्किल नहीं होगा। फिर भी मैं खामोश नहीं रही और अपनी संस्थान की एचआर टीम के पास पहुंची। परन्तु अफ़सोस कि इस टीम, जहां सभी महिलाएं थीं, को भी अधिकारी के यौन प्रस्तावों को सहना पड़ता था। उनके पास मुझे तसल्ली देने के अलावा कुछ नहीं था।

मेरे ये अनुभव सिर्फ़ मेरे नहीं हैं बहुत सी अन्य औरतों के साथ भी यही सब गुज़रा है। फ़र्क़ बस इतना है कि वे इस पर बात नहीं करतीं। पर यह खामोशी एक बहुत बड़ी समस्या है। चुप्पी यौन हिंसा को प्रोत्साहन देती है।

औरतें यौनिक हिंसा को तब तक नज़रअंदाज़ या बर्दाश्त करती रहती हैं जब तक वह असहनीय न हो जाए। सहनशीलता औरतों की मुख्य विशेषता मानी जाती है। अक्सर विवाह के समय माएं अपनी बेटियों को यह सीख देती हैं- अब तुम एक औरत हो, सहना सीखो। सैकड़ों औरतें वैवाहिक संबंधों में घरेलू हिंसा और उत्पीड़न सहती रहती हैं क्योंकि वे एक अच्छी औरत की परिभाषा पर खरा उतारना चाहती हैं। वह औरत जो आवाज़ उठाने की हिम्मत करती है या हिंसा को बर्दाश्त न करे उसे बुरी औरत के नाम से बुलाया जाता है।

महिला आंदोलन की कार्यकर्त्ता आभा भैया के अनुसार "महिलाओं के प्रति होने वाले अपराधों में केवल यौन

हिंसा से जुड़े अपराध ही ऐसे होते हैं जिसमें पीड़ित औरत शर्मिन्दगी महसूस करती हैं व खुद की प्रतिक्रिया खामोशी में कैद कर लेती हैं। वह इस हिंसा को दो बार सहती हैं- एक जब वह हिंसा का शिकार होती हैं और दूसरी बार उस पर चुप्पी की मुहर लगाकर। समाज मानता है कि औरतों का यौनिकता से नकारात्मक संबंध होता है, उनके पास सकारात्मक यौनिक अनुभव होने ही नहीं चाहिए।"

अगर कोई सोचता है कि आज औरत अच्छी व बुरी औरत की रेखाओं को लांघ चुकी है तो वह सच्चाई से कोसों दूर है या फिर किसी एक अपवाद की बात कर रहा है। यह सही है कि पश्चिमी तौर तरीकों का हमारे सांस्कृतिक परिवेश पर प्रभाव पड़ा है, परन्तु हमारे मानस लैगिंक नियमों की गिरफ़्त से अभी भी आज़ाद नहीं हो पाए हैं। लिहाज़ा औरतों को अपनी खामोशी तोड़नी ही होगी।

पर इसके साथ-साथ अब समय आ गया है कि पुरुष भी इस विषय पर अपनी खामोशी तोड़ें। "महिला संबंधी मुद्दों" की पैरवी अधिकतर महिला कार्यकर्त्ता ही करती हैं। पर क्या यौन हिंसा पुरुषों का मुद्दा नहीं है? क्या उनका इससे कोई सरोकार नहीं है? ये लैंगिक विभाजन क्यों है? आखिरकार यौन हिंसा का सीधा संबंध पुरुषों से भी तो है। अगर पुरुष हर तरह की यौन हिंसा को जड़ से खत्म करने में हिस्सा लेंगे और इस केन्द्रिय प्रश्न को सम्बोधित करने में आगे बढ़ेंगे कि वास्तव में असली मर्द कौन होता है तो इस समस्या को सुलझाया जा सकेगा। अब समय आ गया है कि सचेत पुरुष "मर्दानगी" की कैद तोड़ें और उसके बेतुके मूल्यों का पर्दाफ़ाश करें।

यकीनन महिलाओं के साथ यौन हिंसा एक "आदर्श मर्दानगी" साबित करने का नतीजा होती है। मर्दानगी परिभाषित करती है कि असली मर्द कौन है- वो जो ताकतवर, वीर और दबंग हो, जो रोता नहीं हो, सिगरेट व शराब का सेवन करता हो, गाली-गलौज करता हो और इस व्यवहार में अपनी शान समझे। जब ये झूठे आदर्श औरतों को वस्तु समझने वाली संस्कृति में अपनी वैधता पाते हैं तभी पुरुषों के दिलो-दिमाग पर ये सशक्त पहचान के प्रतीक के रूप में हावी होते हैं। परियों की कहानियों में एक आदर्श राजकुमार की छवि इन्हीं से साकार होती है। विज्ञापनों में सिलसिलेवार तरीकों से यह बताया जाता है कि 'मर्द' क्या पहनें व खाएं और पुरुषों व स्त्रियों के साथ कैसे व्यवहार करें। फ़िल्मों में भी छेड़छाड़ की 'नॉर्मल' प्रस्तुति यौन उत्पीड़न को साधारण और आम बना देती है।

इस सांस्कृतिक परिवेश के चलते युवा लड़के अपनी 'मर्दानी भूमिका' गर्व के साथ निभाते हैं। युवाओं के लिए शाहरुख खान की मालबोरो सिगरेट व महेंद्र सिंह धोनी के बालों के स्टाईल का अनुसरण आज के दौर का हिस्सा बन जाता है। सड़कों पर औरतों के साथ छेड़छाड़ व छींटाकशी जवानी की कगार पर खड़े लड़कों के लिए रस्म का रूप इख्तियार कर लेती है। ये रस्म उन्हें ताकत का एहसास कराती है, बिल्कुल "असली मर्दों" की तरह। शोध व अध्ययन यह दावा करते हैं कि इस प्रकार की यौन हिंसा का असल उद्देश्य यौन से जुड़ा नहीं होता बल्कि पुरुषों का औरतों पर सत्ता प्रदर्शन और उससे मिलने वाला मज़ा होता है।

यह स्पष्ट है कि पुरुषों को पिता-भाई या फिर फ़िल्म, क्रिकेट स्टार के रूप में अहम भूमिका निभानी है। लड़कों को स्कूलों व परिवारों में जेंडर की समझ उसकी दकियानूसी भूमिकाओं व्यवहारों और अंतर्संबंधों की जानकारी देना बहुत आवश्यक है। कहने का अर्थ यह नहीं है कि लड़कियों को आदर्श ज़नानगी का पाठ पढ़ाने वाले व्यवहारों और सोच में परिवर्तन करना महत्वपूर्ण नहीं है। इस दिशा में एक छोटी परन्तु महत्वपूर्ण कोशिश शुरू की भी जा चुकी है। लखनऊ में *मासवा* व पुणे में *मावा* संगठन पुरुषों को संवेदनशील बनाने की दिशा में अपना योगदान दे रहे हैं। दिल्ली में *आकार मीडिया ट्रस्ट* शोध, वृत्तचित्र व सेमिनारों के माध्यम से संस्कृति, जेंडर और मर्दानगी के विषय पर कार्यरत है।

इन सभी प्रयासों को विशाल आंदोलन का रूप लेने के लिए पुरुषों व स्त्रियों को अपनी आवाज़ उठानी होगी, और जब वे इस दिशा में कदम बढ़ाएं तो सबसे पहले उन्हें यौन हिंसा जैसे घोर अपराधों को 'छेड़छाड़' कहकर टालने के रवैयों को बदलने की पहल करनी होगी। हमारे सांस्कृतिक परिवेश में कुछ अतिवादी मूलभूत परिवर्तन करने की बहुत अहम ज़रूरत है। उम्मीद है हमारे पुरुष इस मुहिम से जुड़ने के लिए तैयार हैं।